P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-7* ISSUE-4* December- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

हिन्दी के प्रचार प्रसार में स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं आर्य समाज का योगदान

Swami Dayanand Saraswati and Arya Samaj's Contribution in the Promotion of Hindi Language

स्वर्ण लता कदम
एसोसिएट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
शहीद मंगल पाण्डे राजकीय
महिला स्नातकोत्तर
महाविद्यालय,
मेरठ, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश (Abstract)

इतिहास के पन्ने पलटने और देश के अतीत में झाँकने पर कितनी भव्य झाकियाँ देखने को मिलती है। ऋषि मुनियों की तपस्या और त्याग में लीन आभामंडित मुखमण्डल संसार में दया, अहिंसा प्रेम और भाईचारे की भावना फैलाने वाले गौतमबुद्ध, महाराज अशोक सब कुछ दान कर देने वाले राजा हर्षवर्धन, आर्य समाज के संस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती आदि न जाने कितने चेहरे उभरते हैं जिसके सामने मस्तक श्रद्धा से नत हो जाता है। समस्त संसार में अपने मानवतावादी संदेश को इन महापुरूषों ने किसी न किसी भाषा के माध्यम से पहुँचाया होगा। क्या वह भाषा अंग्रेजी थी? कदापि नहीं। वह संदेश भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही पहुँचाया था।

How many glittering scenes can be seen by turning the pages of history and looking into the past of the country. Unknown in the ascetic and renunciation of sage sages, Gautam Buddha, who spread the spirit of mercy, non-violence, love and brotherhood in the auspicious world, Raja Harshvardhan donating everything, Maharaj Ashoka, founder of Arya Samaj, Maharishi Swami Dayanand Saraswati etc. In front of which the forehead turns to reverence. These great men must have spread their humanitarian message all over the world through some language. Was that language English? not at all. That message was delivered through Indian languages only.

मुख्य शब्द : राष्ट्रीयता, स्वामी दयानन्द सरस्वती।
Keywords : Nationality, Swami Dayanand Saraswati.

प्रस्तावना

राष्ट्रीयता के भाव को सुदृढ़ करने के लिए स्वामी दयानन्द ने जिन विभिन्न उपायों को क्रियान्वित करने की योजना बनाई उनमें सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए एक राष्ट्रभाषा के प्रचार और प्रसार की योजना सर्वप्रमुख थी। स्वामी जी ने जो साहित्य हिन्दी को दिया है, वह ''डेमो आक्टेवो साइज के दस सहस्र''[1] पृष्ठों में समाहित है। उनका यह साहित्य जितना विपुल है, उतना ही उपयोगी भी है। आश्चर्य तो यह है कि संस्कृत का प्रकाण्ड पंडित होकर भी उन्होंने अपनी इच्छाओं का माध्यम हिन्दी रखा हिन्दी को एक अभिनव नाम (आर्यभाषा) से सम्बोधित किया।

यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि स्वामी जी की मातृभाषा हिन्दी नहीं थी। वे संस्कृत के निष्णात् विद्वान थे और पर्याप्त समय तक गंगातटवर्ती प्रान्तों का भ्रमण करते हुए संस्कृत में ही सम्भाषण करते तथा अपने विचारों का आदान प्रदान करते रहे। प्रवास के समय उनके जीवन में एक ऐसी घटना घटी जिससे उन्हें यह विदित हो गया कि संस्कृत के स्थान पर लोक भाषा हिन्दी का प्रयोग ही अधिक समीचीन एवं उपयुक्त

है। जब वे कलकत्ता में 23 फरवरी 1873 ई० को गौराचान्ददत्त के घर पर वक्तृता देने उपस्थित हुए तो संस्कृत व्याख्यान का बंगला अनुवाद प्रस्तुत किया। दुर्भाग्यवश न्यायरत्न महाशय अपने पक्षपात एवं पूर्वाग्रह के कारण स्वामी जी की भाषा को ठीक–ठीक अनुवाद नहीं कर सके। फलतः उनका यह बंगला उल्था वक्ता के मूल आशय के विपरीत हो गया। संस्कृत के उपस्थित छात्र समुदाय ने अनुवाद के कार्य पर जब आपत्ति की तो न्यायरत्न महाशय सभा का परित्याग कर चले गये। इस घटना ने स्वामी जी के चिंतन को एक नयी दिशा प्रदान की।

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों ने स्वामी जी तथा उनके साहित्य की पर्याप्त उपेक्षा की। हिन्दी साहित्य के सर्वाधिक महत्वपूर्ण निबंध लेखक आचार्य प्रवर श्री रामचन्द्र ने अपने इतिहास में स्वामी जी का उल्लेख केवल साढे तेरह पंक्तियों में किया है और उनके नाम के साथ कोई विश्लेषण भी नहीं लगाया है, इसी पृष्ठ पर श्रृद्धाराम फिल्लौरी की भी चर्चा है और उनके साथ विलक्षण प्रतिभाशाली विद्वान पंडित विशेषण भी लगाया है तथा उनका परिचय तीस पंक्तियों में दिया गया है।[2] डॉ० माता प्रसाद गुप्त ने भी हिन्दी पुस्तकों का परिचय देते हुए स्वामी जी के सम्बन्ध में अपेक्षित सावधानी नहीं बरती। उन्होंने स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा भारत धर्म महामण्डल काशी के प्रतिपादक स्वामी दयानन्द को एक ही व्यक्ति मान लिया।[3]

डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी साहित्य की भूमिका में स्वामी जी का नामोल्लेख भी नहीं किया है। डॉ० सत्येन्द्र द्वारा विचरित 'समीक्षात्मक निबंध संग्रह में स्वामी जी का समावेश तो नहीं किया गया है। भारतेन्दु का परिचय प्रारम्भ करते हुए 'क्या गदहा को चना चढ़ावे कि होई दयानन्द दुहरेगी का उल्लेख अवश्य किया गया है।[4] अभ्यास करते हुए स्वामी जी ने हिन्दी भाषा में इतनी सिद्धहस्तता प्राप्त की कि उनके प्रसिद्ध ग्रंथ ''सत्यार्थ प्रकाश'' के कर्त्तत्व पर ही लोगों ने प्रश्नवाचक चिहन लगा दिया 'सत्यार्थ प्रकाश की मुहावरेदार भाषा को देखकर कुछ लोगों को संदेह होता है कि वह स्वामी जी का लिखा हुआ नहीं है, किन्तु उनके बतलाये हुए भाव किसी अन्य लेखक ने अपने ढंग से लिखे हैं।''[5] इन अज्ञात नाम लोगों को क्या उत्तर दिया जाये, अन्य तो पी०एच–डी०, डी०लिट् उपाधिधारी ऐसे भी हिन्दी के प्राध्यापक हैं जो सत्यार्थ प्रकाश को अनुदित ग्रंथ समझते हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश का हिन्दी में अनुवाद किया।[6]

स्वामी जी की मातृभाषा गुजराती थी, संस्कृत के वे अद्वितीय विद्वान थे फिर भी राष्ट्र के कल्याण के लिए उन्होंने अपनी मातृभाषा का मोह छोड़ दिया तथा गीर्वाण वारणी की श्रेष्ठता स्वीकार करते हुए भी उन्होंने बहुजन हिताय हिन्दी को गले लगाया। स्वामी जी ने कर्त्तव्य के वशीभूत होकर देश को एक सूत्रता में बाँधने के लिए उन्होंने एक राष्ट्रभाषा का स्वप्न संजोया, ''आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ही महात्मा गांधी जी के पूर्व आसेतु हिमालय की, भारतीय जनता को राष्ट्रभाषा में बाँधने का स्वप्न देखा था और उसे सफल बनाने के लिए उन्होंने आर्यभाषा हिन्दी का प्रचार भी आरम्भ कर दिया।[7]

स्वामी जी ने जहाँ हिन्दी में साहित्य सृजन किया, वहीं अपने प्रत्येक अनुयायी के लिए इस भाषा का अध्ययन आवश्यक निर्दिष्ट किया। अपने भाषणों द्वारा तो इन्होंने इस भाषा का प्रचार किया ही शास्त्रार्थ का माध्यम भी इसे बनाया। इस भाषा के अध्यापन के लिये स्वयं कई पाठशालाएं भी उन्होंने खोली। बम्बई में निर्मित आर्यसमाज के नियमों के नौंवे नियम में ऐसी अनुज्ञा थी कि प्रत्येक मुख्य आर्य समाज में एक साप्ताहिक समाचार पत्र हिन्दी में प्रकाशित हो। स्वामी जी का कुछ साहित्य ईसाई प्रचार के निरोधार्थ छोटे–छोटे ट्रेक्ट्स के रूप में भी प्रकाशित हुआ था। स्वामी जी जीवन में यदि कोई कार्य न कर केवल सत्यार्थ प्रकाश का निर्माण करते तो भी हिन्दी साहित्य में उनका स्थान महत्वपूर्ण होता। उनका यह अकेला ग्रंथ ही 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' के समग्र मौलिक ग्रन्थों के विस्तार के बराबर है। जो ख्याति इसे मिली वह उस युग के किसी लेखक तथा साहित्यिक कृति को नहीं मिली। अकेले इस ग्रंथ ने ही जितना हिन्दी का प्रचार किया उतना कई लेखकों की सम्मिलित कृतियों ने भी नहीं किया। स्वामी जी की योजना के अनुरूप बने गुरुकुलों, कन्या पाठशालाओं तथा डी०ए०वी० स्कूल के माध्यम से भी हिन्दी का पर्याप्त प्रचार हुआ। उन्होंने स्पष्ट रूप से हिन्दी भाषा के लिए देवनागरी लिपि का समर्थन किया। हिन्दी प्रचार प्रसार की जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्था मानी जाती है, उसकी स्थापना भी स्वामी

दयानन्द के पक्के अनुयायी तथा भक्त श्री राम नारायण मिश्र ने की थी।[8]

हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में स्वामी जी की देन अनुपम तथा अविस्मरणीय है। हिन्दी सेवा के लिए उनका संकल्प, उनका सा पांडित्य, उनकी सी अनथक तपस्या उनका सा स्वार्थ त्याग और उनकी सत्यप्रियता का अन्य निदर्शन मिलना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। स्वामी जी ने राष्ट्रभाषा के प्रयोग पर बल दिया हिन्दी की अधिकाधिक व्यापकता प्रदान करने के सभी प्रयत्नों का उन्होंने समर्थन किया। 1882 ई० में भारत के विद्यालयों भाषा के अध्ययन विषयक समस्या की जानकारी प्राप्त करने के लिए श्री डब्ल्यू० डब्ल्यू० हण्टर की अध्यक्षता में एक आयोग स्थापित किया गया। आयोग ने देशवासियों की भाषा विषय सम्मति जाननी चाही। उस समय स्वामी जी ने अनेक पत्र लिखकर आर्य–समाजों को यह प्रेरणा दी कि वे हण्टर कमीशन के समक्ष हिन्दी के प्रश्न को दृढ़ता के साथ प्रस्तुत करें तथा उसे विभिन्न प्रान्तों में शिक्षा का माध्यम बनाने का प्रयास करें। इस सम्बन्ध में उन्होंने आर्य समाज फरूर्खाबाद के मन्त्री तथा उसी नगर के निवासी बाबू दुर्गाप्रसाद को जो पत्र लिखे हैं उनमें स्वामी जी के राष्ट्रभाषा विषयक हार्दिक भाव स्पष्ट होते हैं। वे हिन्दी के प्रचार को मुख्य सुधार की एक मजबूत नींव मानते हैं। स्वामी जी के आदेश और प्रेरणा की अनुकूल प्रतिक्रिया हुई और मेरठ, मुलतान, लाहौर, फर्रूखाबाद, लखनऊ आदि की आर्य समाजों ने कमीशन के द्वारा प्रकाशित प्रश्नों का उत्तर देते हुए विभिन्न प्रान्तों में हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाने पर जोर दिया।

वे अपने सम्पर्क में आने वाले पुरुषों को हिन्दी में कार्य करने की प्रेरणा देते रहते थे। अपने जोधपुर प्रवास काल में उन्होंने महाराज जसवन्त सिंह को पत्र लिखते हुए राजकुमार को हिन्दी और संस्कृत सिखाने के लिए आग्रह किया। अपने ग्रन्थों का उर्दू अथवा अंग्रेजी में अनुवाद किया जाना, उन्हें अभीष्ट नहीं था क्योंकि उनकी यह धारणा थी कि यदि ये ग्रन्थ अन्य भाषाओं में अनुदित हो जायेंगे, तो लोगों को संस्कृत तथा हिन्दी में इन्हें पढ़ने की रूचि नहीं रहेगी। यदि हम यह कहे तो अधिक उपयुक्त है कि स्वामी जी ने हिन्दी को राष्ट्रीयता के एक सुदृढ़ आधार के रूप में स्वीकार किया था। पं० मोहनलाल विष्णुलाल पाण्ड्या के वार्तालाप के प्रसंग में उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया था जब तक समस्त देशवासी एक धर्म, एक भाषा, एक आचार–विचार तथा एक ध्येय वाले नहीं बन जायेंगे तब तक जातीय उन्नति स्वप्नवत् ही रहेगी। निश्चय ही राष्ट्रीय एकता की सिद्धि में राष्ट्रीय भाषा की महत्ता को उन्होंने पूर्णतया अनुभव किया था।

महर्षि के निधन के पश्चात उनका स्थापन्न आर्य समाज अपने संस्थापक के बहुविध कार्यों को पूरा करने में तत्पर हो गया। इसी योजना के अनुसार उसने हिन्दी प्रचार को भी अपना लक्ष्य बनाया। अपने सुदीर्घ जीवन काल में राष्ट्रभाषा पद पर हिन्दी को प्रतिष्ठित करने के लिए आर्य समाज ने अनथक प्रयत्न किये। हिन्दी भाषा के प्रचार एवं प्रसार तथा हिन्दी साहित्य लेखन का कोई ऐसा क्षेत्र अवशिष्ट नहीं है जिसमें आर्य समाज ने अपने कृतित्व का परिचय न दिया हो। पंजाब जैसे प्रान्त में जहाँ हिन्दी जानने और पढ़ने वाले लोगों की संख्या नगण्य थी, आर्य समाज ने हिन्दी प्रचार का उल्लेखनीय कार्य किया। परिणाम यह निकला कि पंजाब में हिन्दी की लोकप्रियता दिन प्रतिदिन बढ़ती गई और वहाँ शिक्षा, पत्रकारिता तथा धर्म प्रचार के लिए हिन्दी को मुक्त कण्ठ से स्वीकार कर लिया गया।

इसी प्रकार आर्य समाज ने दक्षिण प्रान्तों में वैदिक धर्म के प्रचारार्थ जो उपदेशक भेजे, उन्होंने भी अहिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी के माध्यम से धर्म का प्रचार किया। यह कार्यक्रम भारत तक ही सीमित नहीं रहा। अफ्रीका, गायना, मारीशस, फिजी आदि देशो ंमें जहाँ–जहाँ आर्य समाज प्रवासी भारतवासियों के माध्यम से पहुँचा वहाँ–वहाँ वह हिन्दी की विजय वैजयन्ती फहराता गया। परिणाम यह निकला कि आज विश्व भाषा के रूप में हिन्दी, हिन्दी की स्वीकृति जो सम्भावनाएं उत्पन्न हो गई हैं, उनका बहुत कुछ श्रेय आर्य समाज को ही है। नागपुर में आयोजित प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन में उपस्थित विदेशी प्रतिनिधियों ने इस तथ्य को मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया है। जहाँ तक काव्य, नाटक, कथा उपन्यास तथा पत्रकारिता आदि की विभिन्न साहित्य विधाओं में कृतकार्यता प्राप्त कर राष्ट्रभाषा के साहित्य भण्डार को समृद्ध करने का प्रश्न है, आर्य समाजी साहित्यकार इस क्षेत्र में भी अपने दायित्व को पूरा कर चुके हैं। पं० नाथूराम शर्मा शंकर, पं० हरिशंकर शर्मा, पं०

अनूप शर्मा, आदि कवियों, पं० सुदर्शन, पं० चन्द्रगुप्त विद्यालंकार आदि कथाकारों, पं० रूद्रदत शर्मा सम्पादकाचार्य, पं० पद्यसिंह शर्मा आदि पत्रकारों एवं समालोचकों ने आर्य समाज से ही प्रेरणा पाकर हिन्दी साहित्य की श्री वृद्धि की है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आर्य समाज ने राष्ट्रीयता के भाव को एक सुदृढ़ आधार भूमि पर प्रतिष्ठित किया है। स्वदेश निष्ठा, स्व संस्कृति से प्रेम, स्वभाषा अनुराग स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग आदि कतिपय ऐसे तत्व हैं, जिनके आधार पर ही राष्ट्रीयता का भवन खड़ा रहता है। कहा जा सकता है कि अपने मूल रूप में महर्षि दयानंद सरस्वती ने वैदिक धर्म और भारतीय संस्कृति के पुनरूत्थान का बीड़ा उठाया था। केशवचंद्र सेन की सलाह पर इन्होंने संस्कृत के स्थान पर हिंदी को अपने विचारों की अभिव्यक्ति का साधन ही नहीं बनाया, अपने ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना भी हिंदी में की। हिंदी को उन्होंने स्वभाषा का नाम दिया और उसके गद्य को खंडन–मंडन की शक्ति दी। स्वभाषा के साथ ही उन्होंने स्वदेशी और स्वराज्य की महत्ता भी प्रतिपादित की। आर्यसमाज की कुछ सीमाएं भी रही; जैसे केवल वेदों को हिंदी धर्म का मान्य ग्रंथ घोषित करना भारतीय संस्कृति के निर्माण में आर्येतर योगदान की ओर उचित ध्यान न देना आदि किंतु उसने स्वदेशी, स्वभाषा और स्वराज्य का नारा देकर जो देश स्नायुओं में राष्ट्रीयता का संचार किया, वह बहुत महत्वपूर्ण है।

अंत टिप्पणी

1. *Dictionary of National Biography Vol - 1 S.P. Dyananad Saraswati P. 407*
2. *हिन्दी साहित्य का इतिहास; रामचंद्र शुक्ल पृ०सं० 445*
3. *हिन्दी पुस्तक साहित्य 1867–1942 ई० माता प्रसाद गुप्त पृ०सं०–474*
4. *समीक्षात्मक निबंध, डॉ० सत्येन्द्र भारतेन्तु बाबू हरिश्चन्द्र, पृ०सं०–155*
5. *हिन्दी गद्य मीमांसा, रमाकान्त त्रिपाठी, पृ०सं०–237*
6. *हिन्दी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास, (905), डॉ० प्रताप नारायण टंडन, पृ०सं०–293*
7. *दक्षिण भारत के हिन्दी प्रचार आन्दोलन का समीक्षात्मक इतिहास, पी०के० केशवन नायर, पृ० 23*
8. *हिन्दी साहित्य को आर्य समाज की देन, क्षेत्र चन्द्र सुमन पृ०सं०–18*